कविता की संवेदना और कथ्य
(संदर्भ – कुमार अम्बुज)

हरिहरानंद शर्मा, व्याख्याता (हिन्दी)
राजकीय आचार्य संस्कृत महाविद्यालय, अजमेर (राज.)

सारांश

कविता का समाज से वास्तविक सम्बन्ध है। वह समाज के समस्त संदर्भो की गवाह होती है। कविता का कथ्य और संप्रेषण कवि की रचना प्रक्रिया का हिस्सा है। यदि कवि अन्तस में अनुभव करने के उपरान्त तटस्थ और निरपेक्ष भाव से सृजन करता है तो वह रचना समाज सापेक्ष होती है। प्रस्तुत शोध आलेख कवि कर्म में संवेदना, रचना प्रक्रिया में संवेदना के महत्त्व, कवि कर्म की उपादेयता, उसके कथ्य क विवेचन को कुमार अम्बुज की कविताओं के सन्दर्भ में उद्घाटित करने से सम्बन्धित है।

संकेताक्षर – संवेदना, कवि कर्म, कुमार अम्बुज।

समाज की सुखदुखात्मक घटनाओं को जब कवि अपनी ज्ञानेन्द्रियों से अनुभव करता है, तो उसके मन और मस्तिष्क में एक वैचारिक मंथन होता है। यह मंथन उसके कथ्य की संकल्पना का रेखांकन होता है। यही रेखांकन करने की प्रवृत्ति या प्रतिक्रिया को संवेदना कहा जाता है। इस संदर्भ में डॉ. नगेन्द्र लिखते है– *मूलतः संवेदना का अर्थ है ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्राप्त अनुभव अथवा ज्ञान। किन्तु आजकल इस शब्द का सामान्यतः प्रयोग सहानुभूति के अर्थ में होने लगा हैं। मनोविज्ञान में अब भी इस शब्द का प्रयोग इसके मूल अर्थ में ही किया जाता है और इस अर्थ में यह किसी बाह्य उत्तेजना के प्रति शरीर यंत्र की सर्वप्रथम सचेतन प्रतिक्रिया होती है। ...... साहित्य में इसका प्रयोग स्नायविक संवेदनाओं की अपेक्षा मनोगत संवेदनाओं के लिए ही अधिक होता है इस दृष्टि से अनुभूति एवं भावप्रवण व्यक्ति की संवेदना अधिक जाग्रत होती है। यह अधिक संवेदनशील मन की प्रतिक्रिया की शक्ति है, जिसके द्वारा संवेदनशील व्यक्ति, दूसरे किसी व्यक्ति के सुख दुख को समझकर उससे अपना तादात्म्य स्थापित कर लेता ह।* **1**

तात्पर्य यह है कि रचनाकार के मन में जो वैचारिक प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है, उसे वह अपनी भाषा में सहृदयों तक संप्रेषित करता है। यह प्रतिक्रिया विभिन्न स्तरों पर होती है। डॉ रामदरश मिश्र – *मानवीय संवेदनाएं प्रायः एक सी होते हुए भी वैशिष्ट्य धारण करती रहती है। संवेदना के इस वैशिष्ट्य का अपने आप में व्याख्येय नहीं हो सकता वह अनुभव कराया जा सकता है और विशिष्ट परिवेशों के माध्यम स।***2** यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि इस वैचारिक प्रतिक्रिया में उसे अत्यंत सतर्कता से कार्य करना होता है।

उसे अपने परिवेश या लोक के साथ उन मूल्यों की भी सृष्टि करनी होती है। जिसके लिए वह कवि कर्म करता है। श्रीराम परिहार के शब्दों में – *सर्जक अपने समय लोक और संवेदना से जुडकर ही दायित्व सजगता प्राप्त करता ह*।**3** अर्थात् दायित्व बोध की इस प्रक्रिया में कवि को अपनी चेतना शक्ति को पूरी निष्ठा के साथ आत्मसात करना होता है, एक जीवन दृष्टि विकसित करनी होती है। कवि को अपनी अभिव्यंजना में सामाजिक जीवन की आद्योपान्त सृष्टि और दृष्टि को सचेतन पूर्णता प्रदान करनी होती है। तभी वह रचना सवेदनापरक सम्पन्न होती है। इसी सतर्कता को संवेदना कहते है। किसी रचना की संवेदना के पक्ष पर चिन्तन करते हुए शिव मृदुल लिखते हैं – *संवेदना और सृजन की आवश्यकता एवं उपादेयता की दृष्टि से विचार करें तो दोनों ही कर्मो का प्रधान पात्र सृजनधर्मी है। उसका संवेदनशील होना उसके सृजन की प्रथम मूलभूत आवश्यकता है। संवदेना के गहरे सागर में डुबकी लगाकर ही सृजनधर्मी मानव, मन की संवेदनाओं को अभिव्यक्ति प्रदान करता है। जिसके कथ्य में रमकर पाठक यह अनुभव करता है कि उसके द्वारा पढी जा रही कृति जैसे स्वयं के लिए लिखी गई हो*। **4** विचारणीय तथ्य यह भी है कि रचनाकार के संवेदनापूर्ण अनुभव से लेकर सृजन प्रक्रिया तक की यात्रा में संरचनात्मक उपादानों के कारण संवेदना मूल रूप में न रहकर उसमें कुछ बदलाव आ जाता है। साहित्यकार की अनुभूत संवेदनाएं साहित्य में प्रकट होते समय उनके साथ साहित्यिक दृष्टि भी जुड़ जाती है। यह इसलिए कि साहित्य प्रत्येक युग की देन है। प्रत्येक युग के समाज की संवेदनाएं भिन्न भिन्न होती है समाज में संवेदनाएं सदैव परिवर्तित होती रहती है किन्तु प्रत्येक युग के साहित्य में संवेदना को भाषा, भाव एवं प्रेरणा के कारण नया अर्थ प्राप्त होता रहता है। इस सम्बन्ध में डॉ सुरेश सिन्हा लिखते हैं – *साहित्य में संवेदना से अभिप्राय है, वह अनुभूतिप्रवणता जो सूक्ष्मातिसूक्ष्म प्रभावों को ग्रहण करने की क्षमता से पूरित होती है। इसका अर्थ यह भी होता है, कि किस प्रकार का साहित्य हमें किन भावनाओं की प्रतीति करवाने में समर्थ होता है। भावनाओं के स्वर विविध होते हैं। वह आधुनिक बोध भी हो सकता है, या मानव अस्तित्व की बुनियादी विशेषताएं भी। संवेदना का धरातल चाहे जो भी हो, अभिव्यक्ति उसे साहित्य में मिलती है। नई अनुभूति, नई भाषिक अर्थवत्ता, अनभवों का नया संयोजन तथा मानव सम्बन्धों में परिवर्तन की सूक्ष्म परख आदि से भी साहित्य में संवेदना स्पष्ट होती ह*।**5** अतः स्पष्ट है कि रचनाकार अपनी संवेदना को समाज से गृहीत रचना सामग्री से एकरूपता स्थापित करके साहित्यिक सर्जना करता है। उसकी संवेदनाएं समाज से जुड़करएक विशिष्ट दृष्टिकोण का रूप बनाती है। रचनाकार की ये संवेदनाएं साहित्य में अभिव्यक्त होकर वैयक्तिक नहीं रह जाती बल्कि सामाजिक बन जाती हैं। यदि उसकी संवेदनाएं वैयक्तिकता की सीमा में ही सीमित हो जाती तो उसमें इतनी व्यापक प्रेषणीयता कदापि नहीं आ सकती। प्रेषणोयता के इसी गुण की यह संवेदनशील वृत्ति उसे साधारण से विशेष बनाती है।

कविता में संवेदना और उसका स्वरूप (कुमार अम्बुज)

कविता का उद्देश्य किसी भी सामाजिक संदर्भ को संवेदना के धरातल पर प्रतिष्ठित कर सहृदय तक प्रेषित करना होता है। यह संप्रेषण सहृदय या पाठक को उसकी उच्चतम भावभूमि पर पहुँचा देता है। यह कविता हृदय की जटिलताओं या क्षुद्रताओं को दूर करके मानवीयता और श्रेष्ठता के चिन्तन स्तर को उसके परिपक्व स्वरूप तक बोध कराने में समर्थ होती है। विश्वनाथ प्रसाद तिवारी के मतानुसार – समर्थ काव्य कवि के विशिष्ट अनुभव, ज्ञान और विवेक से पैदा होता है, जो पाठक की रूचि का परिष्कार करता है, उसके अनुभव को समृद्ध करता है, उसकी संवेदना को विकसित करता है।**6** अतः स्पष्ट है कि कवि, समाज या सामाजिक के जीवन यथार्थो को अपनी रचना में इस प्रकार गुम्फित करता है कि पाठक उसमें अपनी निजता का अनुभव करता है।

कुमार अम्बुज ने अपने जीवन में उपार्जित जीवनानुभव तथा परिवेशगत सच्चाइयों को बौद्धिक परिकल्पना का आधार प्रदान करके कविता में नवीन आयाम उपस्थित कर दिया है। उन्होने एक संवेदनशील कवि के रूप में अपनी गहन अन्तर्दृष्टि तथा अनुभव जगत की विविधता से समसामयिक समाज व जीवन को अपनी कविताओं में संजोने का प्रयत्न किया है। इनकी कविताएं समाज के आम आदमी की कविता है। आम आदमी के दुख, उसके दर्द, उसकी पीड़ा, बैचेनी, तृष्णा, आजीविका, असहमति, वर्जनाएं आदि को इनकी कविता शब्दबद्ध करती है। इनकी कविता मे पाठकों के मन में छिपी हुई संवेदनाओं को असीम गहराई से स्पर्श करने की क्षमता है। इस भयावह समय में कवि समाज, राजनीति, धर्म, संस्कृति, व साहित्य जैसे विभिन्न क्षेत्रों में व्याप्त अमानवीय स्थितियों को चुनौती देता है उनका प्रतिरोध करता है जिससे समाज का मानवीय रूप संरक्षित हो सके।

कुमार अम्बुज की कविता में कथ्य

कुमार अम्बुज के कथ्य में युगीन यथार्थ की गूँज सुनाई पड़ती है। उन्होने वर्तमान की सामाजिक विडम्बनाओं को पहचानकर अपनी कविताओं में प्रत्यक्ष किया है। एक गहन संवेदनशील कवि के रूप में उन्होंने मानव व मानवीयता के विरूद्ध कार्यरत सभी ताकतों के खिलाफ अपना सख्त प्रतिरोध प्रकट किया है। वे लिखते हैं – *कविता का मुख्य सरोकार और व्यापार अपने समय की ओर अपने मनुष्य समाज की कठोरतम समीक्षा करना है और साथ ही अनैतिकता और अमानवीयता का प्रतिरोध करना ह*।**7** इसी प्रतिरोध की कड़ी में वे वैश्वीकरण को लेकर सबसे पहले चिन्ता व्यक्त करते हैं। उनका मानना है सारा संसार आज बाजार है, व्यापार केन्द्र है। वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप पूरे जमाने में जड़ जमा रहे **बाजारवाद** ने आज सामाजिक जीवन को सभी तरह से संकटग्रस्त बना दिया है। केवल बेचना और खरीदना ही आज का युग

धर्म हो रहा है। बाजारवाद के मुनाफा बटोरने की नीति से उत्पन्न उपभोक्तावादी संस्कृति, विज्ञापनवादी संस्कृति, प्रोद्योगिकी संस्कार आदि ने हमारी भारतीय संस्कृति और निजी पहचान का मिटा कर मनुष्य को गहन अन्धकार में पछीटने को तैयार किया जा रहा है। मानव उसकी निजी संवेदना खोकर आत्मकेन्द्रित रह गया है। इतना ही नहीं वह वस्तु के रूप में तब्दील हो गया है। व्यक्ति से वस्तु हो जाने की नियति की स्थिति को स्वीकार करते हुए आज हम प्रायः क्रेता या विक्रेता की संज्ञाओं में सीमित होने के लिए अभिषप्त है। कुमार अंबुज ने अपनी कविताओं में बाजार के मनमोहक मायाजाल में फंसते मानव का चित्रण करके बाजार के वाणिज्य तंत्र का सटीक चित्रण किया है। कवि ने वैश्वीकरण के सुपर बाजार में घुसने के लिए ललचाए हुए मानव का चित्रण करके विलुप्त मानवीयता तथा जर्जर होती जा रही हमारी संस्कृति का जिक्र किया है।

अम्बुज के ***क्रूरता*** में संकलित **बाजार** नामक कविता का एक उदाहरण जिसमें कवि की दृष्टि बाजार में जहां कहीं भी जाती है, वहां भीड़ ही भीड़ नजर आने लगती है। चाहे वह दुकान हो, जनरल कॉस्मेटिक शॉप हो, मेडिकल शॉप हो कपड़े की दुकान हो, मंडी हो या अन्य कोई स्थान सब जगह केवल संवेदनहीन भीड़, अबोध भीड़। कवि के अनुसार बाजार ऐसी ताकत के साथ मानव पर हमला करता है कि मानव अपनी उपयोगिता से परे संवेदनहीन होकर बस केवल खरीदारी की ओर मोहित होने लगता है –

दुकानें अपनी मस्ती में थी

और सजी हुई थीं जवान स्त्रियों की तरह

वहाँ लोग उठाए हुए थे बहुत सा सामान

अभी कितना कुछ बचा है खरीदने के लिए

ऐसा भाव उनके पसीने से लथ पथ शरीर से टपक रहा था

वे बाजार बंद हो जाने की आशंका में कह रहे थे भागमभाग। ***8***

कुमार अम्बुज की कविता हमारे समय की अनेक सामयिक घटनाओं को खुली अभिव्यक्ति प्रदान करती है। उनकी ***एक बार फिर*** कविता तेजी से बाजार बनने वाली दुनिया की तस्वीर प्रस्तुत करती है। बाजार अब मानवीय जीवन का अभिन्न हिस्सा बन चुके हैं। कवि देखते हैं, कि बचपन के मैदान, सबसे प्रिय बैठने के स्थान तथा कुदरती जगहें सभी अब दुकानों में बदल गई है। जिस स्थान से होकर माचिस खरीदनें के लिए

दो मील जाना पड़ता था वह जगह भी बाजार में परिवर्तित हो गई है। इस प्रकार समाज में बाजार का बनना दुनिया की दिनचर्या में प्रतिपल होने वाली एक मामूली सी घटना बन गई है –

हर कदम पर देखते हुए बाजार

गुजरते हुए हर क्षण एक न एक बाजार से

हम भूलते हैं अक्सर

कि कब बाजार में हैं और कब बाजार में नहीं

जहाँ जरा भी आजादी, वहीं दिख जाता बाजार

देखते हैं कि फिर कि जहाँ दो जन हुए इकट्ठे

वहीं हो जाता बाजार

अब बाजार का बनना इस दुनिया की दिनचर्या में

*हर पल होने वाली एक मामूली सी घटना। **9***

कुमार अबुज ने बाजारवाद के इस दौर में साधारण मानव की आर्थिक उलझनों को गम्भीर तटस्थता के साथ देखा है। कवि का कहना है कि बड़े – बड़े बाजार व मॉल के आने पर छोटे छोटे दुकानदारों की दुकान व उनका व्यवसाय मंद हो गया है। पूरे दिन भर सड़क के किनारे अमरूद की डलिया को लेकर बैठने के बावजूद भी डलिया के फल बिना बिके रह गए है। अपनी डलिया के फल जो कभी कुछ ही घंटों में बिक जाते थे, उन्हें आज बेचने में असमर्थ, विवश एवं कुंठित दिखाई पड़ता वह सबसे छोटा दुकानदार अपनी मानसिक व्यथा को किसे कहे। इसका मार्मिक चित्रण ***क्रूरता*** संग्रह के ***आखिरी दुकानदार*** शीर्षक कविता में अभिव्यक्त हुआ है –

अगर ऐसा ही रहा तो अमरूद स्वाद से गायब हो जाएंगे

डलिया सिर पर उठाते हुए बुदबुदाता है बूढा

वह बाजार का सबसे आखिरी दुकानदार

बाजार की सबसे बूढी उम्मीद की तरह

*जाता है घर। **10***

कवि ने बाजारवाद के आगमन के बाद छोटे छोटे उद्योग धंधों को पूरी तरह समाप्त कर देने की पूँजीवादी कुटिल मंशा को अभिव्यक्त किया है। प्रस्तुत कविता में कवि ने अमरूद बेचने वाले इस दुकानदार के माध्यम से छोटा मोटा धंधा करने वाले अनेकानेक ऐसे दुकानदारों का चित्रण किया है, जो इस बाजारीकृत समाज में संकटग्रस्त जिन्दगी गुजार रहे हैं। कवि इनके जीवन पर नजर डालते हुए कहते हैं, कि बाजार में विभिन्न रंग, स्वाद व मनमोहक पैकट वाले विविध कंपनियों के फल उपलब्ध हैं। इनमें कृत्रिम ताजगी दिखाने के लिए अनेक प्रकार के रसायनों का उपयोग भी चढाया जाता है यह जानते हुए भी ग्राहक इन्हें खरीद लेते है। जबकि छोटे छोटे दुकानों के ताजे फल को ग्राहक नजरंदाज कर देते हैं। ब्राण्डेड फल भी आज के ग्राहकों की मांग में अधिक है। यह प्रकरण दर्शाता है कि किस तरह आज का मनुष्य बाजार का गुलाम हो गया है।

अनंतिम काव्य संकलन की **जेब में सिर्फ दो रूपये** कविता बाजार की चमत्कृत दुनिया से तिरस्कृत व उपेक्षित लोगों की व्यथा का बखान करती है। कवि के अनुसार बाजार उन लोगों का है जिनके पास पैसा है। बाजारीकृत दुनिया में निर्धन केवल बेबसी की सिसकियों में अपनी व्यथा कथा का मनन और वाचन करता रहता है। जिसके जेब में रूपयों का खालीपन है, वह बाजार से कुछ भी नहीं खरीद सकता है, अर्थात् वह केवल ग्राहक या उपभोक्ता बन सकता है। विसंगति की इस व्यवस्था का कवि ने इन पंक्तियों में वर्णन किया है–

महज दो रूपये होने की निरीहता बना देती है निरबल

जब चारों तरफ दीख रहा हो ऐश्वर्य

जब चारों तरफ से पड रही हो मार

तब निहत्था हो जाना है जिन्दगी के उस वक्त में

जब जेब में केवल दस रूपये। **11**

बाजारीकरण के इस समय में आयुर्वेद जैसी भारत की परंपरागत चिकित्साविधि भी अब बिकाउ माल बन गई है। इन पर बडी – बडी मल्टीनेशनल व्यावसायिक कंपनियों ने अपना प्रभुत्व जमा लिया है। ये कंपनियां आयुर्वेद औषधियों की बिक्री विज्ञापन के बल पर कर रही है। विज्ञापन से मोहित होकर उपभोक्ता ऊँचे –ऊँचे दामों पर औषधियाँ खरीदते हैं। इसके पीछे मुनाफा कमाने का बाजारवादी अर्थतत्र छिपा हुआ है। **परमानंद श्रीवास्तव** की दृष्टि में – *"आयुर्वेद पर बहुराष्ट्रीय कंपनियों की नजर है। वे देशी प्रकृति संपदा को महंगे दामों पर खरीद रही है। आयुर्वेद का सत्व लेकर उच्चतर चिकित्सा विज्ञान को लाभकारी व्यापार*

बना रही है। कविता विदेशी पूंजी के प्रभुत्वशाली हस्तक्षेप भूमण्डलीकरण मुक्त बाजार जैसे विषयों पर एक चिंतापूर्ण प्रक्रिया है।" **12** आज आयुर्वेदिक जडी बूटियाँ वनस्पतियाँ पत्तियाँ फूल बीज इत्यादि से बनाई गई दवाइयाँ बाजार की सबसे कीमती चीज बन गई है–

"च्यवन भी भौचक आत्मा तले

*चार रूपये का आँवला बिक रहा है सौ रूपये में" **13***

यहाँ कवि **आयुर्वेद** शीर्षक कविता के जरिए आयुर्वेदिक दवा निर्माण के पीछे छिपे दिखावा या ढोंग का पर्दाफाश करती है। कवि का कहना है कि इन आयुर्वेदिक औषधियों के उत्पादन के पीछे रोग निग्रह के सदुदेश्य से ज्यादा उपभोक्ताओं की होड़ तथा बाजार के बढ़ते लाभ रहे हैं। इसी ओर इशारा करते हुए अंबुज लिखते हैं –

अब कोई नहीं पहचानता जडी बूटियाँ

जो कहते हैं कि हम पहचानते हैं – वे उद्योग हैं

शहद बनाती है मधुमक्खियाँ

और कंपनियों के डंक **14**

अंबुज की एक अन्य कविता **पेशाबघर** आज के माहौल में भीड़भाड़ भरे सार्वजनिक स्थानों को व्यावसायिक उपयोग कर देने पर व्यंग्य करती है। यह कविता बाजारी दुनिया में विज्ञापन की भूमिका की अलग तस्वीर प्रस्तुत करती है। कविता एक ऐसे पेशाबघर का चित्र खींचती है कि जिसका स्थान बाजार की ऊँची ऊँची दीवारों के पीछे हैं तथा इसके दीवार पर कोकाकोला का विज्ञापन जगमगा रहा है –

बीस कदम की दूरी से भी नहीं लगता था पेशाबघर

उसके दूसरी तरफ थी टेलीविजन की दुकान

वहीं दुकान के आगे फुटपाथ पर रखे हुए थे टेलीविजन के मॉडल एक के ऊपर एक

लगता था कि किसी का भी स्विच ऑन किया जाए तो

सामने आ जाएगा पेशाबघर की दीवार पर बना हुआ

*कोकाकोला का विज्ञापन **15***

इस नई होती दुनिया नामक कविता में कवि ने बाजार के चकाचौंध के बीच मानवीय संवेदना के आधारभूत संदर्भ जैसे प्रेम, करूणा, समन्वय, सदाचार, सादगी आदि गृहस्थ जीवन के विभिन्न पहलुओं के चुपचाप बदल जाने को लेकर भी चिन्ता व्यक्त की है। कवि का मानना है कि यह बाजारी सभ्यता हमारे मानवीय परिचय को भी छीन रही है। हमारा मानवीय जीवन ऐसे मुकाम पर पहुँच गया है कि जीवन के ताल मेल तक उसके हाथों से फिसल रहा है।

जहाँ स्पर्श की कामना और उत्तेजना चिंता के समुद्र में डूब रही है

जहाँ झर रहा है तुम्हारा पराग

टूट रही हैं इच्छाओं की पंखुरियाँ

जहाँ दूर दूर तक नहीं सुनाई पडती कोई तान

यह कौन सी ऋतु है जहाँ शब्दों से छीने जा रहे है उनके अर्थ। **16**

आजके माहौल म सब कहीं बाजारीकरण से उत्पन्न औद्योगिक **उपभोक्तावादी संस्कृति** पनप रही है। ये हमारे परंपरागत कर्मचारियों को रोजगार के लोभ में फँसकर हमेशा के लए अपना गुलाम बना देते है। उनकी मेहनत को ये लोग अपना ब्राण्ड नाम जोडकर उंचे दामों में बाजार पहुचाते है चंदेरी नामक कविता में इस तथ्य को उजागर किया गया है। चंदेरी गांव चंदरी सिल्क साडियों के लिए प्रसिद्ध है। अपने काम में अत्यन्त कुशल इन कारीगरों की बुनावट और धागा इसकी प्रसिद्धि का कारण है। ब्राण्डेड कम्पनी के मालिकों द्वारा इनकी कुशलता बहुत ही कम दाम में खरीदकर वैश्विक बाजार में बड़े मुनाफे के साथ बेची जाती है। बड़े पैमाने पर अमानवीय शोषण हो रहा है। कारीगर उत्पीड़न का शिकार हैं। जितना मूल्य मिलना चाहिए उतना नहीं मिलता है। दमतोड़ मेहनत करने के बाद भी कारीगर का जीवन यंत्रणा में है। कवि के सपने में हमेशा चंदेरी की रेशमी साडियों के धागों पर लटके हुए कारीगरों के सिर दिखाई पडते है–

चंदेरी मेरे शहर से बहुत दूर नहीं है

मुझे साफ दिखाई देता है सेठ का हुनर मै कई रातों से परेशान हूँ

चंदेरी के सपने में दिखाई देते हैं मुझे

धागों पर लटके हुए कारीगरों के सिर। ***17***

यहां कवि ने कम मजदूरी में काम करने वाले श्रमिकों के जीवन की विडम्बना को चित्रित किया है। मनुष्य को मशीन की भांति देखने की इस प्रवृत्ति के सम्बन्ध में श्री प्रकाश शुक्ल ने लिखा है – *इस उपभोक्तावादी समाज में मनुष्य 'वस्तु' के रूप में इस्तेमाल किया जाता है और मजदूर वर्ग का उसके उत्पाद से जो अलगाव (मार्क्स का एलियेनेशन) होता है, यह बड़ा ही विचारणीय प्रश्न ह।* **18**

वैश्वीकरण से उत्पन्न बाजारवाद, और उपभोक्तावादी संस्कृति ने विज्ञापन को वर्तमान जीवन का अभिन्न अंग बना दिया है। आज हमारे सांस्कृतिक जगत में विज्ञापन का हस्तक्षेप इस सीमा तक आ चुके हैं ि कवे जनता की रुचि अरुचियों को भी तय करने लगे हैं। ग्राहक इसके प्रभाव में आकर वस्तु की गुणवत्ता या अर्थवत्ता जाने बिना बाजार के छल का शिकार हो जाता है। कवि का मानना है कि औद्योगीकरण के प्रभाव से मानव सभ्यता खोखली होती जा रही है। मानव का रूपांतरण होता जा रहा है। झूठे विज्ञापनों की भरमार ने मनुष्य को असमंजस जैसे मनोवैज्ञानिक रोग में डाल दिया है। वस्तु की सत्यता, उपयोगिता और नैतिकता की किसी को परवाह नहीं है। विज्ञापन के शब्दों और चित्रों ने उसे मोहित कर लिया है –

वे हर बार मुझे शब्दों और दृश्यों के

नए भुलावे में ले जाते हैं

बताते है नए इजाद किए यंत्रों की उपयोगिता

धकेलते हैं असीम लालच में

कहते हैं

*यहीं धन्य होगा जीवन। **19***

तकनीकी क्रान्ति के बढते प्रभाव से आम आदमी की सोच में आए परिवर्तन को भी कुमार अम्बुज ने अपनी कविता में उकेरा है। उनका मानना है कि आज संसार प्रौद्योगिकी से संचालित है। प्रौद्योगिकी ने मानवीय जीवन को पूर्णतः यंत्रावलम्बित बना दिया है। आज मनुष्यता कम्प्यूटर, मोबाइल और इण्टरनेट के जाल में फंसी हुई है। इन यंत्रों पर उसकी निर्भरता इतनी बढ गई है कि उसक सोचने और विचार करने की क्षमता प्रभावित होने लगी है। मस्तिष्क विचारहीन होकर यांत्रिक बन गया है। कवि अपनी याददाश्त नामक कविता में आज के युवाओ की बहुमूल्य निर्णय की क्षमता को प्रभावित कर स्मृति को नष्ट कर देने वाले टूल के रूप में प्रौद्योगिकी को घातक संज्ञा देकर कहा है–

वे चाहते हैं कि एक दिन ऐसा आए और जल्दी आए

कि मैं अपना नाम – पता पूछूं किसी रोबोट से

और भूल जाऊँ आक्रमणकारियों के चेहरे और सारे तरीके

जिनसे आततायी मुझे नष्ट करने के बाद

खत्म करेंगे मेरे बच्चों को। **20**

भारत में औद्योगिकीकरण के फलस्वरूप जो यंत्रीकरण का आरंभ हुआ। इस विकास में हमने भौतिक प्रगति तो खूब की परन्तु साथ ही साथ इन कारखानों के बढते शोर और धुएं ने मानव जीवन को बहुत प्रभावित किया है। कारखानो से निकलने वाली काली चिमनी का धुआं ओजोन परत को नुकसान पहुंचाने के साथ साथ मानव स्वास्थ्य पर भी प्रतिकूल प्रभाव डाल रहा है। चराचर के जीवन और अस्तित्व को भयानक हानि हो रही है। **पर्यावरण और मानव अस्तित्व** के प्रति संघर्ष बढ गया है। –

तमाम नदियों, पहाड़ों और पेड़ों पर गिरती है

काली चिमनी की धुआं भरी लम्बी परछाई। **21**

इसी तरह कुमार अम्बुज की कविताएं प्रौद्योगिकी के मनुष्यता पर प्रभाव उसके पीछे छिपे खतरे, उसका हस्तक्षेप आदि को रेखांकित करते हैं। सामाजिक जीवन के अभिन्न अंग बन चुके मीडिया को लेकर भी कवि का चिन्तन सापेक्षीय है। जिस तेज गति से संचार माध्यमों ने आज के मानव को अपने मायाजाल में बांध लिया है। आज कोई भी कार्य हो उसका निष्पादन बिना संचार माध्यम के संभव ही नहीं होता है। किन्तु इन संचार माध्यमों ने मानव के व्यवहार को भी बदल दिया है। वे मनारंजन के साथ विकृतियों को भी समाज में फैला रहे हैं। 'इंस्टेंट कल्चर' का प्रवेश समाज में हो गया है। सब कुछ एक मिनट में चाहिए। भावुकता, आत्मीयता और सहजता इस युग में निरर्थक हो गयी है। जल्दबाजी की छटपटाहट ने बाजार में सब कुछ एक मिनट में तैयार कर देने की भोजन सामग्री बना दी है। मानव भी इसी एक मिनट की तर्ज पर प्रेम, शोक, वियोग, नींद, मजा सब लेना चाहता हैं –

नहीं बचा अब लोगों में इतना धैर्य

कि कर सकें इत्मीनान से कोई भी काम

और सब कुछ एक मिनट में चाहिए

एक मिनट में हंसी

एक मिनट में शोक – वियोग

एक मिनट में नींद और स्वप्न

एक मिनट में मजा आना चाहिए। **22**

क्षणिक उत्सव के इस दौर ने मानवीय सम्बन्धों में भी परिवर्तन ला दिया है। परिवार के रिश्तों में दरार, मूल्यों में क्षरण, संस्कार और आत्मीयता का विघटन, आदि विकार समाज में फैल रहा है। एकल परिवार के कान्सेप्ट ने संयुक्त परिवार की गरिमा को नुकसान पहुंचाया है। सम्मान, आदर, सद्भाव जैसे मूल्य सिमटते जा रहे हैं। कुमार अम्बुज इन पारिवारिक मूल्यों की संवेदना को बचाकर रखने की मंशा रखते हैं। उनकी 'किवाड़' नामक कविता में घर, परिवार, विश्वास तथा सुरक्षा को सुदृढ करने की कोशिश है। कवि पिता के विशाल हृदय, उनके परिवार के प्रति दायित्व और समर्पण को रेखांकित करते हैं कि किस प्रकार एक पिता अपने पूरे परिवार के विश्वास का आधार होता है। –

इन किवाड़ों पर

चंदा सूरज

और नाग देवता बने हैं

एक विश्वास और सुरक्षा खुदी हुई है इन पर

इन्हें देखकर हमें पिता की याद आती है। **23**

वर्तमान जीवन की असंगतियों पर चर्चा करते हुए तीन बूढे मित्रों के माध्यम से कवि ने आज के व्यस्त जीवन में विस्मृत कर दिए गए मानवीय सम्बन्धों की पुनः आवश्यकता बताई है। ये तीनो बूढे मित्र अतीत को स्मरण करके खुशहाल जीवन के अनेक चित्र आपसी चर्चा में बयान करते हैं। पारिवारिक संदर्भो में वृद्ध समस्या हमारे देश में सर्वपरिचित है। नौकरीपेशा सेवानिवृत्त व्यक्तियों का जीवन, पत्नी के देहान्त के बाद अकेलेपन की समस्या, विधवा स्त्रियों का अनादर, महानगरीकरण में बुजुर्गो का जीवन जम नहीं पाना आदि अनेक समस्याएं आज समाज में मौजूद है। जिन बच्चों के लिए पूरा जीवन दिया वे ही बच्चे उनका तिरस्कार करते हैं। इस संघर्ष को अनुभव करने के बाद उनका मानना है कि मानवीय सभ्यता ने बाह्य

विकास तो बहुत किया है परन्तु आत्मीय विकास मे वह पिछड़ गया है। उसे इस विकराल समय में मानवीयता को अवश्य बचाना चाहिए। इस एक कमी को वे 'तीन बूढ़े' नामक कविता में व्यक्त करते हैं –

वे अपना अतीत पूर्वजन्म की तरह याद करते थे

अगले जन्म के बारे में उनकी थी अलग अलग राय

कभी कभी उनमें से एक जिद करता था कि सब कुछ

अभी और इसी समय ठीक होना चाहिए। **24**

निष्कर्ष – इस प्रकार कुमार अम्बुज की कविताओं में मानवीय समाज में व्याप्त अनेक विकसित संस्कृति के विकारों के प्रति चिन्ता प्रकट की गई है। आधुनिकीकरण की अंधी दौड़ मनुष्य के सोचने समझने के ऊपर हावी है। संचार माध्यमों ने उसके मस्तिष्क पर नियंत्रण कर लिया है। मशीनीकरण में उसको सारे सम्बन्ध एक मिनट या एक चुटकी बजाने जितने समय में सम्पन्न होते दिखने चाहिए। संवेदना को अर्थहीन मानते युवा जीवन को एक क्षण में जीना चाहते हैं। बुजुर्गो के प्रति बढती संवेदनहीनता, पारिवारिक मूल्यों के क्षरण ने मानवीय जीवन को खतरे में डाल दिया है। व्यक्तिवादी सोच ने जीवन अर्थपरक कर दिया है। धन सर्वव्यापी सर्वत्र प्रभावी होकर मनुज के ऊपर छा गया है। ऐसे में कवि लोकमंगल का पक्षपाती होकर संपूर्ण मानव समुदाय से अपील करना चाहता है कि संवेदना संरक्षित और सुरक्षित रहे। मानव समुदाय मानवीयता से पूरित हो।

संदर्भ

1- कहानीकार महीपसिंह संवेदना और शिल्प (डॉ नगेन्द्र का कथन) – अजित चव्हाण, चन्द्रलोक प्रकाशन, कानपुर, 2011, पृ. 73

2- हिन्दी कहानी :अन्तरंग पहचान – डॉ रामदरश मिश्र वाणी प्रकाशन नई दिल्ली 1977 पृ. 32

3- वही (डॉ श्री राम परिहार का कथन) – पृ. 79

4- कुमार अम्बुज का काव्य संवेदना और शिल्प (शिवमृदुल का कथन) – डॉ दिनिमोल एन. डी. सरस्वती प्रकाशन मुम्बई 2016 पृ. 123

5- हिन्दी उपन्यास – डॉ सुरेश सिन्हा लोकभारती प्रकाशन इलाहबार 1974 पृ. 57

6- कविता का संप्रेषण – विश्वनाथ प्रसाद तिवारी पृ. 155

7- कुमार अम्बुज का काव्य संवेदनाऔर शिल्प – डॉ दिनिमोल एन.डी. सरस्वती प्रकाशन मुम्बई 2016 पृ.125

8- बाजार, क्रूरता – कुमार अंबुज, राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली द्वितीय संस्करण 2007, पृ. 25

9- एक बार फिर, अतिक्रमण – कुमार अंबुज, राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली प्रथम संस्करण 2002, पृ. 56

10- आखिरी दुकानदार, क्रूरता – कुमार अंबुज राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली द्वितीय संस्करण 2007, पृ. 93

11- जेब में सिर्फ दो रूपये,अनंतिम कुमार अंबुज राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली प्रथम संस्करण 2008, पृ. 47

12- कविता का अर्थात् – परमानंद श्रीवास्तव, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, आवृत्ति संस्करण 2015, पृ. 246

13- आयुर्वेद, अनंतिम – कुमार अंबुज, राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली प्रथम संस्करण 2008, पृ. 32

14- वही पृ. 31 – 32

15- वह पेशाबघर, अनंतिम, – कुमार अम्बुज, राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली प्रथम संस्करण 2008, पृ. 82

16- इस नई होती दुनिया मे, अनंतिम, – कुमार अम्बुज राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली प्रथम संस्करण 2008, पृ.53 –54

17- क्रूरता, चंदेरी – कुमार अम्बुज, राधाकृष्ण प्रकाशन द्वितीय संस्करण 2007 पृ. 23–24

18- कुमार अम्बुज का काव्य संवेदना और शिल्प (श्रीप्रकाश शुक्ल का कथन) – डॉ दिनिमोल एन. डी. सरस्वती प्रकाशन मुम्बई 2016 पृ. 63

19- क्रूरता, याददाश्त – कुमार अम्बुज, राधाकृष्ण प्रकाशन द्वितीय संस्करण 2007 पृ. 51

20- वही पृ. 52

21- क्रूरता, परछाई – कुमार अम्बुज, राधाकृष्ण प्रकाशन द्वितीय संस्करण 2007 पृ. 67

22- क्रूरता, एक मिनट में – कुमार अम्बुज, राधाकृष्ण प्रकाशन द्वितीय संस्करण 2007 पृ. 53

23- किवाड़, किवाड़ – कुमार अम्बुज, आधार प्रकाशन पंचकूला हरियाणा द्वितीय संस्करण 1996 पृ. 20

24- क्रूरता, तीन बूढ़े – कुमार अम्बुज, राधाकृष्ण प्रकाशन द्वितीय संस्करण 2007 पृ. 82–83